इकाई 5 जय–सत्–कामदेव

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 विषय का सामान्य परिचय

5.4 जय का परिचय

5.5 सट का परिचय

5.6 कामदेव का परिचय

5.7 जय (विजय), सट् तथा कामदेव की विभूतियों का परिचय तथा उनसे मिलने वाली शिक्षा

5.8 सारांश

5.9 पारिभाषिक शब्दावली

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.11 बोध प्रश्न

5.1 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन आप निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करें :

- जय अर्थात् विजय का श्रेय स्वयं को देने के क्या भव स्थान हैं? इसका श्रेय भगवान को, गुरु को देने से क्या लाभ हैं? जय को श्रीकृष्ण अपनी विभूति क्यों कहते हैं?
- जय का श्रेय अन्य को देने की क्या हानियाँ होना संभव है?
- सत् को भगवान् श्रीकृष्ण अपनी विभूति क्यों कहते हैं? इसके क्या लाभ–हानि हैं?
- कामदेव का परिचय दीजिये? किस काम को भगवान अपना स्वरूप बतलाते हैं? आर्म के रूप में काम के क्या दुष्प्रभाव हैं जिनसे आपको बचना चाहिए?

5.2 प्रस्तावना

श्रीकृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता के दसवें अध्याय के श्लोक 36 में अर्जुन को अपनी विभूतियों का वर्णन करते हुए कहते हैं ''जयोऽस्मि, व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम्'' अर्थात् जीतने वालों का विजय, निश्चय करने वालों का निश्चय तथा सात्विक पुरुषों का सत्त्व (सात्विक भाव) मैं हूँ।

सामान्य व्यवहार में तो जीतने वाला स्वयं को जीत का श्रेय देता है तथा पराजय का ठीकरा काल, कर्म तथा ईश्वर पर फोड़ता है। जय का श्रेय लेने वाले को ही हार का उतरदायित्व भी स्वयं को ही लेना चाहिए। परन्तु ऐसा नहीं होता है। व्यक्ति हार के लिए किसी को बली का बकरा (बवचम हवंज) बनाने का भरसक प्रयत्न करता है। बला टालने (ठदना च्ंपदह) का पूरा प्रयत्न करता है। तुलसी ने ठीक ही लिखा है। रामचरित मानस में–

कालहिं, कर्महि, ईश्वरहिं मिथ्या दोष लगाहिं।

लंका युद्ध पर तथा महाभारत युद्ध में विजय पर विजेताओं ने कैसा अभिगम तथा व्यवहार किया यह जानना रसप्रद व हितकर होगा।

सत्य का प्रश्न भी बहुत जटिल है। सत्य–असत्य, अर्द्धसत्य के प्रयोग महाभारत में भी हुए। कई बार असत्य ही सत्य का रूप लेकर आता है यह भी कहा गया। सत्य नामक अहिंसा के बीच सही चुनाव करना भी टेढ़ी खीर हैं आप इन सबको ध्यान से पढ़े, सीख लें तथा उसे जीवन में उतारें तो आपका बहुविध कल्याण होगा। सत्य के लाभों व असत्य की हानियों को समझ कर उचित चुनाव (निर्णय) करना सीखें। निश्चय मेरा रूप है, भगवान के इस कथन को समझने की आवश्यकता है। असत्य को सत्य करने की धृष्टता करने वाले लोग अपनी गलती को स्वीकार नहीं कर पाते।

5.3 विजय का सामान्य परिचय

जय का आशय विजय से तथा कर्म की सफलता से है। इसमें पुरुषार्थ तथा भाग्य की क्या भूमिका है। विजेता नेता तथा सफल सेवक का अभिगम क्या है? इसे महाभारत तथा रामायण से आप सीखनें का प्रयत्न करेंगे। कुछ उपनिषदों की कथायें/संवाद भी सीखने के लिए उपयुक्त हैं। देवासुर संग्राम की अनेक पौराणिक कथायें भी आपके लिए शिक्षाप्रद सिद्ध होंगी।

वर्तमान परिस्थिति का चित्रण एक लोकोक्ति में मिलता है, ''जय या सफता के अनेक बाप हैं परन्तु पराजय/असफलता तो अनाथ है।''

'सत्त्वं सत्त्ववताहम्' भी एक गंभीर विचार योग्य मुद्दा है। सत्य–असत्य का निर्णय करना सरल नहीं है। इसमें बहुत साहस जुटाना होता है।

'निश्चय मेरा रूप है' तो भी निश्चय–अनिश्चय के बीच व्यक्ति, भ्रम जाल में फंसा रहता है। प्रस्तुत इकाई आपको इन सभी जटिल प्रश्नों से रूबरू करायेगी। इन सब प्रश्नों में नीति का सहारा लेना पड़ता है। महाभारत युद्ध में धर्म की विजय का मार्ग प्रशस्त करने के लिए श्रीकृष्ण ने नीति/धर्म को भी पुनः परिमार्जित किया। गीता के अन्त में संजय ने उद्घोष किया– जहाँ योगेश्वर श्रीकृष्ण हैं वहीं जग है, यश, कीर्ति व नीति है।

रामायण में माता–पिता की आज्ञा मानकर श्रीराम ने 14 वर्ष के लिए वनवास में जाने का निर्णय लिया। बाली को मारने के लिए वृक्ष की ओट में से तीर चलाने का निर्णय नीतिगत विवाद का विषय बना। रावण के रहस्य विभीषण से लेकर लंका विजय पाकर भी नीतिगत निर्णय था जिसने विवादों को जन्म दिया।

वर्तमान इकाई आपको सिखाने के लिए रसप्रद विश्लेषण प्रस्तुत करेगी। पुराणों व इतिहास की प्रमुख घटनाओं का जो आपमें नीतिगत चेतना फूंक देगी। ये आपको अच्छा नेता या अच्छा सेवक बनने में सहायक होंगे। हनुमान, अंगद, सुमन्त्र, सुग्रीव के चरित्र से सीख मिलेगी।

कामदेव के दो रूप हैं– सन्तान हेतु काम शास्त्र सम्मत है। वह श्रीकृष्ण का रूप है। परन्तु धर्म विरूद्ध काम वर्जित है। वह श्रीकृष्ण का रूप नहीं है। आज की भोगवादी संस्कृति में यह ज्ञान आपको अनेक खड्डों में गिरने से बचायेगा। कामदेव की विभूतियों को आपको बहुत सावधानी से समझना होगा। कामदेव के चरित्र को ही हम

इतिहास, पुराणों से लेंगे। स्मृति में वर्णित काम सम्बन्धी नीति/धर्म का ज्ञान भी आपके लिए जीवन उपयोगी होगा।

5.4 जय का परिचय

गीता के दसवें अध्याय के श्लोक 36 में श्रीकृष्ण जय भाव को अपना स्वरूप बतलाते हैं। आप यह ध्यान रखें कि यहाँ जय शब्द एक भाव का सूचक है न कि किसी व्यक्ति का नाम। आध्यात्मिक दृष्टि से जय का अर्थ स्वयं के मन पर तथा इन्द्रियों पर आत्म नियंत्रण होने से है। शम तथ दम के पालन से ऐसा होता है। इस जय के लिए मन को स्थिर रखना पड़ता है। जय–पराजय, सुख–दुःख, लाभ–हानि, जन्म–मृत्यु के द्वन्द्वों से मुक्त रखना पड़ता है। ऐसे भाव का श्रीकृष्ण ने गीता के अध्याय 2 के श्लोक 38 में वर्णन किया है तथा श्लोक 54 में स्थिर बुद्धि (समता बुद्धि योग) कहा है। ऐसा व्यक्ति कामना रहित मन वाला होता है। दुःख आने पर उसके मन में उद्वेग नहीं होता तथा सुख पाकर वह शांत रहता है। राग, भय, क्रोध से वह मुक्त होता है। वह इन्द्रियों को उनके विषयों से पूर्णतः हटा लेता है। एक कछुए की तरह एक कछुआ जैसे अपने सभी अंगों को समेट लेता है उसी तरह स्थिर बुद्धि व्यक्ति अपनी सभी इन्द्रियों को उनके विषयों से हटा लेता है। ईश्वर का साक्षात्कार करके वह अपने मन को भी इन्द्रियों के विषयों के प्रति अनासक्त/विरक्त कर लेता है। वह भगवान के ध्यान में लग जाता है। (गीता 2.55–61)

अब इन्द्रियों के विषयों को समझें–

इन्द्रिय	**विषय**	**इन्द्रिय**	**विषय**
आंखे	दृष्टा	रसना	स्वाद
कान	सुनना	त्वचा	स्वाद
नाक	गंध लेना		

भक्ति मार्ग का एक वैकल्पिक उपाय है अपने मन को भगवान को सौंप देना तथा इन्द्रियों को भगवान की सेवा में लगा देना। नेत्र प्रभु का दर्शन करें, कान प्रभु की कथा सुनें, नाक प्रभु को अर्जित पुष्पों की सुंगध ले, रसना प्रभु का नाम जप करें/कीर्तन करें तथा प्रभु का प्रसाद ग्रहण करें। त्वचा प्रभु का स्पर्श अनुभव करें। (गीता 9.34 : 18.65) इस भाव को अनूप जलोटा ने भी अपने भजन में बार–बार व्यक्त किया है। इस श्लोक को श्रीकृष्ण ने गीता में अर्जुन को दो बार कहा है। ऐसा श्लोक गीता में यही है जो दो बार भगवान ने बोला है। आप भी इस श्लोक के अनुसार जीवन जीओं तो आत्मजयी बनकर मोक्ष पा सकोगे। अतः यह श्लोक नीचे दिया गया हैः–

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामे वैष्यसि सत्यं प्रतिजानाति प्रियोऽसि मे।।

''हे अर्जुन! तूं मुझ में मनवाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करने वाला हो तथा मुझे प्रणाम कर। ऐसा करने से तूं मुझे ही प्राप्त होगा, यह मैं सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ। तूं मेरा अत्यन्त प्रिय है।''

भारत में भक्त तो सदा प्रभु की जय होने का उद्घोष करते ही हैं। प्रभु की जय हो, सत्य/धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भाव हो तथा विश्व का कल्याण हो।

सांसारिक दृष्टि से जय का अर्थ है किसी संघर्ष या मिशन में जीत (सफलता) प्राप्त होना। जय पाने पर नेता का वर्तन कैसा हो तथा सेवक का व्यवहार कैसा हो? दोनों में अहंकार न बढ़े यह आवश्यक है क्योंकि भगवान किसी का अहंकार रहने नहीं देते। अहंकारी की जय को कब से पराजय में बदल दें यह किसी को पता नहीं होता। विजेता का उचित व्यवहार कैसा हो यह जानने के लिए आपको पुराणों व इतिहास का अध्ययन करना होगा।

लंका युद्ध में श्रीराम की विजय

श्रीराम, भगवान विष्णु के अवतार थे। वे लंका विजय के बाद कहते हैं–

दिवगंत पिता दशरथ जब आशीर्वाद देने युद्ध भूमि पर प्रकट हुए तो श्रीराम ने कहा–

तात सफल तव पुण्य प्रभाऊ। जीत्यो अजय निसाचर राऊ।। (लंका कांड 111.2)

''हे पिता जी! आपके पुण्य के प्रभाव से अजेय राक्षस राज रावण पर मुझे जय मिली।''

श्रीराम ने लंका युद्ध में मारे गये वानर भालुओं पर इन्द्र से अमृत वर्षा कराकर पुनः जीवित करा दिया। विभीषण से वस्त्राभूषण की भेंट दिलवा दी। इसके बाद श्री राम उनको अपनी जय का श्रेय देते हुए बोले–

''हे भाइयों! आपके बल से ही मैंने रावण को मारा तथा विभीषण का राजतिलक किया।''

इस प्रकार श्रीराम ने लंका जय का कोई अहंकार न करके सारा श्रेय वानर–भालुओं की सेना को दिया।

अयोध्या में लौटने पर श्रीराम ने पुनः लंका जय का श्रेय अपने साथ आये हनुमान, सुग्रीव, अंगद, विभीषण आदि को देते हुए अपने गुरु वशिष्ठको उनका परिचय कराते हुए कहा–

''हे गुरु जी मुनिवर! ये सब मेरे सखा हैं। लंका युद्ध के महासागर में ये सब मेरे जहाज समान बने। मेरे हित के लिए इन्होंने अपने जन्म तक या प्राण तक मेरे लिए समर्पित कर दिये। अतः ये सब मुझे भाई भरत से भी अधिक प्रिय हैं।

इस आख्यान से आपको क्या शिक्षा मिलती है? (संकेत : अच्छा नेता जय का श्रेय अपने सहायकों को देता है तथा जय के अहंकार से मुक्त रहता है।)

हनुमान ने सीता की खोज की तथा लंका दहन किया

श्री हनुमान ने श्रीराम का असंभव कार्य सीता की खोज करना सफलतापूर्वक सम्पन्न किया तथा सकुशल लौट आये। श्रीराम को सीता का संदेश दिया। लंका भी जला कर आये थे जिससे लंका के राक्षसों का मनोबल गिर गया।

श्री हनुमान ने अपनी जय का विवरण अपने मुँह से नहीं दिया। हनुमान के पुरुषार्थ व पराक्रम की कथा जाम्बवन्त ने श्रीराम को सुनाई। श्रीराम ने हनुमान को श्रेय देते हुए कहा–

सुनु कपि तोहि समान उपकारी। नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी।।

(सुन्दरकांड 31, 3–4)

श्रीराम बोले हे हनुमान! तुम जैसा मेरा उपकार करने वाला देव, मानव, मुनि कोई नहीं है। मैं तुम्हारे उपकार के ऋण से मुक्त नहीं हो सकता। मन में विचार कर देखो। बार–बार श्रीराम ने हनुमान को देखा तथा उनके नेत्रों में खुशी के आंसू गिरने लगे।

श्रीराम के वचन सुनकर तथा उनकी खुशी के आंसु भरा मुख देखकर हनुमान उनके चरणों में लेट गये प्रेम से व्याकुल होकर तथा त्राहि माम त्राहि माम बोलते हुए।

प्रभु ने हनुामन को अपने हाथों से उठाकर गले लगा लिया। अपने निकट बैठा कर हनुमान से पूंछा कि तुमने रावण द्वारा पालित व रक्षित लंका को किस प्रकार जलाया? प्रभु के वचन सुनकर अभिमान रहित वचन हनुमान बोले–

सो सब तब प्रताप रघुराई। नाथ न कछु मोरी प्रभुताई।। (सुन्दरकांड, 32.5)

''प्रभु लंका दहन में मेरी कोई बहादुरी नहीं है। वह तो सब आपका ही प्रताप है।''

इस प्रकरण से आप क्या शिक्षा लेते हैं? (संकेत : सेवक अपनी जय का बरवान स्वयं के मुँह से न करे। स्वामी आभार व्यक्त करे तथा ऋषि स्वीकार करे तो भी सेवक के लिए यही उचित है कि यह अपनी जय का श्रेय अपने स्वामी को ही दे। इससे वह जय के अहंकार से बचा रहेगा।)वाल्मीकि रामायण में भी ऐसा ही वर्णन मिलता है।

रावण का अहंकार

लंकापति राक्षस राज रावण जय के अहंकार से ग्रस्त हो गया। हनुमान के साथ संवाद में भी रावण का अहंकार झलका था। तुलसी ने लिखा–

बोला विहंसि महा अभिमानी। मिला हमहिं कपि गुर बड़ ज्ञानी।। (सुन्दरकांड 23, 1)

रावण महा अभिमानी था। (उसने देवताओं तथा ग्रहों को जीत कर बंदी बना रखा था। उसके पुत्र मेघनाद ने इन्द्र को हरा दिया था।) वह बोला है ''अरे हनुमान वानर! मुझे तुम ज्ञान देने वाले बड़े गुरु मिले हो।''

अंगद के साथ संवद में रावण का जय का अहंकार और अधिक मुखर हुआ जब उसने अंगद को कहा–

''मरी प्रभुताई को कैलाश पर्वत जानता है। मैं वही बलवान रावण हूँ जिसने कैलाश पर्वत को अपने हाथों से उठा लिया। मेरी शूरता शिव जानते हैं जिनकी पूजा अपने सिर काट कर कमल की तरह मैंने चढ़ा दिये।''

यह हुआ भक्ति का अहंकार (लंका कांड 24.2)

जानहिं दिग्गज उर कठिनाई। जब जब घिरहूं जाई सरिआई।।
जिन्ह के दसव कराल न फूटे। उर लागत मूलक रव टूटे।। (लंका कांड 24.3)

''दिग्गज प्रभु से भिड़े तो मेरी छाती पर कोई निशान भी नहीं पड़ा परन्तु वे मूली की तरह टूट गये।''

शूरवीरता का अहंकार।

(लंका काड 24.4)

जिसके चलने से धरती डोलती है जैसे मतवाले हाथी के चढ़ने से छोटी नाव डोलती है। मैं वही जय प्रसिद्ध रावण हूँ। अरे प्रलाप करने वाले वानर क्या तूने कभी मेरा नाम नहीं सुना?

परम अहंकार। इसी ने रावण को सपरिवार नष्ट कर दिया। लंका का राज्य भी चला गया।

आप इस घटना से क्या सीखते हैं? (संकेत : एक बुरा नेता मिआ मिट्टू बनता है। अहंकार उसकी जय को पराजय व सर्वनाश में बदल देता है। अतः जय का अहंकार नहीं करना चाहिए।)

महाभारत में जय का श्रेय

महाभारत युद्ध में विजय के बाद भीम तथा अर्जुन को अहंकार हो गया था। श्रीकृष्ण ने उनके अहंकार को तोड़ने के लिए दो कार्य किये–

1. अर्जुन के अपनी रथ के उतरने के बाद हनुमान के नीचे उतरने ही रथ जलकर राख हो गया। इससे श्रीकृष्ण ने यह बताया कि महाभारत युद्ध में मारक अस्त्रों के प्रहार को हनुमान ने रोक रखा था।
2. वे सब पांडवों को वक्रवाहन के कटे सिर के पास हो गये जो महाभारत युद्ध को पर्वन शिखर पर से देख रहा था। उससे पूंछा कि युद्ध की जय किसकी हुई? उसने कहा, ''मैंने तो पूरे युद्ध में केवल श्रीकृष्ण को ही युद्ध लड़ते देखा। अतः महाभारत में जय श्रीकृष्ण की हुई।''

वास्त्व में यह सत्य है कि मनुष्य को अपनी जय का श्रेय भगवान को ही देना चाहिए। इससे वह अहंकार से बचा रहेगा। कर्ता–कर्ता तो भगवन ही हैं। हम तो निमित्त मात्र ही हैं।

एक और विवादास्पद प्रश्न है कि जग में पुरुषार्थ प्रमुख है या भाग्य? इसका उत्तर यह है कि भाग्य प्रबल या बहुत अनुकूल हो तो कम पुरुषार्थ से भी सरलता से जय हो जाती है। यदि भाग्य औसतन अनुकूल हो तो कठोर पुरुषार्थ करने से जय मिलती है। यदि भाग्य कमजोर हो या दुर्भाग्य प्रबल हो तो पराजय मिलती है। पुरुषार्थ तथा उनके भाग्य दोनों की ही भूमिका जय में होती है। भाग्य के भरोसे बैठकर पुरुषार्थ नहीं करने वाले को जय नहीं मिलती।

सुग्रीव को किष्किंधा का राज्य मिल गया परन्तु वह भोग–विलास में पड़ कर राम काज को भूल गया। धन्यवाद देना भी भूल गया। हनुमन ने जगाया था।

श्रीकृष्ण ने गिरिराज धारण करके ब्रज की रक्षा की इन्द्र के कोप से परन्तु इसका श्रेय दिया ग्वाल बालों को तथा राधा जी को कृपा को।

5.5 सत् का परिचय

सात्विक भाव ज्ञान के प्रकाश से प्रकट होता है। इसी से शांति मिलती है। श्रीकृष्ण सात्विकता को अपना ही रूप मानते हैं। सात्विक भाव का आधार ज्ञान व सत्य है। दो अन्य प्रकृति के गुण हैं राजसिक भाव जिसमें स्वार्थ की कामनायें, कर्म संघर्ष, तनाव, चिंता आदि होते हैं। मिथ्या का भी आसरा लेते हैं। श्रीकृष्ण इसको अपना रूप नहीं कहते क्योंकि इसमें ज्ञान, सत्य व सात्विकता, शक्ति आदि तत्त्व नहीं होते। इसी प्रकार

श्रीकृष्ण तमोगुण को भी अपना रूप नहीं मानते क्योंकि इसमें अज्ञान का अंधकार, आलस्य प्रमाद, दीर्घसूत्रता तथा कई बार विपरीत ज्ञान (सही को गलत व गलत को सही मानना) होता है। झूठ, फलकमट, धोखाधड़ी, हिंसा भी हो सकते हैं।

सात्विक व्यक्ति के निर्णय सत्य व ज्ञान के प्रकाश पर आधारित होते हैं। इसमें कल्याण तत्व होता है। उद्देश्य तथा साधन दोनों पवित्र होते है। परन्तु सत्य का पालन कठिन होता है। इसमें बड़ा नैतिक साहस चाहिए। अतः यह कहा गया है कि 'सांच बरोबर तप नहीं।' सात्विक व्यक्ति को शांति मिलती है।

राजसिक प्रकृति में साध्य शुभ हो तो भी साधन अपवित्र हो सकते हैं। संघर्ष में जय के लिए कूटनीति व मिथ्यापन का सहारा लेना पड़ता है। संघर्ष, भय व तनाव जनित बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं। सकाम कर्म बन्धन में डालते हैं। राजसिक निर्णयों का यही परिणाम होता है।

तमोगुण अज्ञान का अंधेरा देता है। व्यक्ति आलस्य, प्रमाद, नींद, विपरीत ज्ञान में उलझा रहता है। निर्णय टालने की प्रवृत्ति बढ़ती है। निर्णय असत्य पर आश्रित हानि पहुँचाने वाले होते हैं।

भगवान का एक नाम सत्यनायण भी है। आप यदि अच्छे निर्णय कर्त्ता बनना चाहते हैं तो सत्त्वगुण का स्वयं में विकास करें। तमोगुण त्याग कर रजोगुण में जायें। रजोगुण को दबाकर सत्त्वगुण का विकास करें। सतोगुण से श्रीकृष्ण का साक्षात्कार मिलेगा।

तीनों कालों में जो अपरिवर्तित रहता है वही सत् या सत्य है। जैसे प्रकृति के सभी गुण उपयोगी है। सृष्टि बनाने के लिए ब्रह्मा रजोगुण अपनाते हैं, पालन के लिए विष्णु सतोगुण अपनाते हैं तथा प्रलय के लिए शिव तमोगुण अपनाते हैं।

यहाँ केनोपनिषद् की एक गाथा का आप ध्यान से अध्ययन करें।

देवासुर संग्राम में देवों की विजय हुई। जय हमारी हुई है इस भाव से सभी देवताओं को अहंकार हो गया। ब्रह्मा ने देवताओं का अहंकार तोड़ने के लिए एक यक्ष को प्रकट किया।

सर्वप्रथम अग्निदेव को यक्ष का पता लगाने का भेजा। उसकी यक्ष से बात करने की हिम्मत नहीं हुई। वह ब्रह्मा के पास लौट आया।

ब्रह्मा ने अग्निदेव से पूछा, ''तुम्हारी शक्ति क्या है?'' अग्निदेव बोले, ''मैं सभी स्थावर–जंगम पदार्थों को जलाकर भस्म कर सकता हूँ।'' ब्रह्मा ने कहा, ''इस तिनके को जलाओ।'' अग्निदेव उसे नहीं जला सके। वे लज्जित होकर लोट गये।

वायुदेव भी यक्ष के पास गया। कुछ भी न बोल सके। लौट आये। ब्रह्म ने तिनका डालकर कहा कि इस ''तृण को उड़ा दो।'' वायुदेव उसे नहीं उड़ा सके। उठाना तो दूर हिला भी नहीं सके।

अब देवराज इन्द्र यक्ष के पास गये। देवराज इन्द्र का अहंकार देख यक्ष अन्तरध्यान हो गया। इन्द्र ने सजी धजी उमा देवी को अन्तरिक्ष से देखा। उन्होंने पूछा कि, ''माता! ये यक्ष कौन थे?'' माता ने कहा, ''वे तो ब्रह्म थे। तुम जय को अपनी मानकर उसका अभिमान करते हो। परन्तु जय तो ब्रह्मा की ही होती है।''

यह सुनकर इन्द्र, वायु तथा अग्नि सभी देवों का जय का अहंकार दूर हो गया।

महाभारत युद्ध में अधर्म पर धर्म की विजय का मार्ग प्रशस्त करने के लिए श्रीकृष्ण ने कर्म/सत्य को पुनः परिभाषित किया। इसकी आलोचना भीष्म पितामह से भी की थी। परन्तु इसके औचित्य को आप समझने का प्रयत्न करें।

1. महाभारत युद्ध में अस्त्र–शस्त्र नहीं उठाऊँगा। रथ का पहिया हाथ में क्यों उठाकर भीष्म की ओर वार करने दौड़े?

   औचित्य : भगवान भक्त के अधीन होते है। भक्त का प्रण–पूरा करने के लिए उन्होंने अपना प्रण तोड़ा। भीष्म परम भागवत भक्त ने प्रण किया था–

   ''जो मैं आज हरि को शस्त्र न गहाऊँ,
   तो मैं माँ गंगा का पुत्र न कहाऊँ।''

2. गुरु द्रोणाचार्य हथियार त्याग दे इसके लिए श्रीकृष्ण ने धर्मराज युधिष्ठिर से कहलाया **''अश्वस्थामा हतो...........नरो वा कुंजरो।''**

   औचित्य : जब सत्य व अहिंसा के बीच संघर्ष हो तो सत्य न बोलें, मौन हों। बोलना अनिवार्य हो जाये तो अर्धसत्य या असत्य बोलें। गुरुद्रोण जब तक जीवित रहते तब तक बहुत सेना को मार देते। अतः इनका धर्म की विजय के लिए हटाना धर्म सम्मत था।

3. कर्ण जब हथियार विहीन रथ का पहिया निकाल रहा था तब उस पर प्रहार करना युद्ध के नियमों के विरूद्ध था अधर्म था।

   औचित्य : कर्ण ने कभी अर्थ/नियम का पालन नहीं किया। धर्म की दुहायी देकर अपनी रक्षा करने का उसे कोई अधिकार नहीं था। जैसे को तैसा की नीति धर्म सम्मत है। जुए की सभा में उसने द्रौपदी को वेश्या कहा तथा अभिमन्यु को सात वीरों ने मिलकर मारा यह अधर्म था।

4. जंघा पर गदा का प्रहार दुर्योधन पर भीम से कराया वह अधर्म था। युद्ध के नियमों के विरूद्ध था।

औचित्य : द्यूत सभा में द्रौपदी को अपनी जंघा पर बैठने को कहना दुर्योधन का दुराचरण था। जैसे को तैसा ही नीति से उसकी जंघा पर भीम से गदा प्रहार करना धर्म सम्मत था।

जय के लिए सत्य/धर्म को श्रीकृष्ण ने पुनः परिभाषित कर नीति सम्मत धर्म की अधर्म पर विजय का मार्ग प्रशस्त किया जो उचित था।

महाभारत में यह कथन उपयुक्त है कि कई बार असत्य ही सत्य का रूप लेकर हमारे सामने आता है।

5.6 कामदेव का परिचय

गीता के अध्याय 10 के श्लोक 28 में श्रीकृष्ण ने कहा है, ''शास्त्रोक्त रीति से सन्तान उत्पत्ति का हेतु कामदेव मैं हूँ।'' यहाँ कामदेव का तथा उनकी विभूतियों का आपको अध्ययन करना है।

कामदेव भी एक देवता हैं। इनका सम्बन्ध स्त्री–पुरुष के काम (ैमग) से तथा सन्तानोत्पत्ति से है। कामदेव को धमराज विष्णु तथा लक्ष्मी का पुत्र मानते हैं। कामदेव की पत्नी का नाम रति है जो प्रेम तथा आकर्षण की देवी है। कामदेव का वाहन तोता है। कामदेव का धनुष पीला है। यह गन्ने से बना हुआ है पीले पुष्पों से सजा हुआ है।

कामदेव का तीर धनुष से चलता है तो ध्वनि नहीं होती। जिसको यह तीर लगता है वह भी आनन्द तथा काम रस की मधुरता अनुभव करता है। कामदेव का धनुष तीन कोणों का होता है जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश के प्रतीक हैं।

कामदेव वसन्त पंचमी को जन्मे थे। उनका पर्व 'मदनोत्सव' कहलाता है। यह बसन्त ऋतु व पतझड़ के बाद नये पत्ते व फूल उगने का समय है। वह प्रकृति बहुत प्रसन्न व सर्जनात्मक होती है।

कामदेव का व्यक्तित्व बहुत युवा तथा आकर्षक है।

कामदेव के अन्य नाम :

कंदर्म, मन्मथ, मदन, मनसिज, पुष्प अन्वा, पुष्पवंत, रतिकांत, रामवृंत आदि। शिव ने अनंग नाम भी रखा था।

श्रीकृष्ण–रूक्मिणी के सबसे बड़े पुत्र प्रद्युम्न कामदेव के ही अवतार थे।

ऋतुराज बसंत को कामदेव की संतान भी कहते हैं।

काम का विस्तृत अर्थ 'कामनायें' है। यह जीवन के चार पुरुषार्थों में से तीसरा है। प्रथम धर्म है। मानव जीवन का परम उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति है। त्रिवर्ग के सिद्धान्त के अनुसार धर्म सहित अर्थ कमाकर धर्म विहित कामना पूर्ति में उपयोग कीजिए। ऐसा करने पर मोक्ष तो स्वतः ही मिल जायेगा। मोक्ष का अर्थ है जन्म–जन्म के चक्र से मुक्त होकर परमात्मा की शरण मिलना।

काम का वैभव सौन्दर्य, आकर्षण तथा सन्तानोत्पत्ति है। संसार का सृजन कर्म कामदेव से ही चल रहा है। वह जड़–चेतन सभी सृष्टि में व्याप्त है। केवल धर्म सम्मत काम ही भगवान का रूप है। (गीता 7.11) धर्मसम्मत काम का अर्थ नीति शास्त्रों में बतलाया है। मनुस्मृति उसमें प्रमुख है। (मनुस्मृति अध्याय 3 श्लोक 45–50)

ऋतुकाल चार दिन मासिक धर्म के स्त्री प्रसंग के लिए वर्णित हैं। इसके बाद ग्यारहवें तथा तेरहवें दिन की रात्रियाँ भी स्त्री प्रसंग के लिए वर्जित है। हिन्दू तिथि पत्रक की अष्टमी, दशमी, एकादशी, पूर्णिमा, अमावस्या, पुण्य तिथि, श्राद्ध तिथि की रात्रियों में भी काम ῭(मग) वर्जित है। इस प्रतिबंध का पालन करने तथा गृहस्थी भी ब्रह्मचारी माना जाता है। इससे उत्तम स्वास्थ्य तथा दीर्घायु प्राप्त होती है।

कामदेव स्त्रियों में बसता है। घर में स्त्रियों का सम्मान करने से देवता घर में प्रसन्न हो बसते हैं। उनको मांगलिक अवसरों पर वस्त्राभूषण व मिष्ठान भेंट करके प्रसन्न रखना चाहिए। स्त्री के आंसू घर को बरबार कर देते हैं तथा वंश बेल सूख जाती है। (मनुस्मृति 3.61–62)

कामदेव का आनन्द उपभोग के लिए विधिवत् विवाह करें। लिव–इन–रिलेशनशिप नीति सम्मत नहीं है। विवाहेत्तर सम्बन्ध भी विधि मान्य नहीं हैं। बलात्कार तो घोर दंडनीय अपराध है। इन सबसे आप बचें। रावण का नाश मर्यादाहीन काम से ही हुआ था।

अब आप कामदेव की कुछ पौराणिक कथाओं से भी शिक्षा ग्रहण करें।

कामदेव का शिव द्वारा दहन

शिव तपस्या रत थे। तारकासुर को मारने के लिए शिव का ....

रति का वरदान

रति वियोग से दुःखी रति के शिव आराधना की। शिव ता आशुतोष हैं। उन्होंने प्रसन्न होकर रति को वरदान दिया। जब यदुवंश में द्वापर में श्रीकृष्ण का अवतार होगा तब

तुम्हारा पति कामदेव उनका पुत्र हो अवतार लेगा। तब तक वह बिना शरीर के .... में आयेगा। वह अनंग कहलायेगा। तुम बाणासुर की कन्या ऊषा बनोगी। पति कामदेव के यहाँ तुम्हारा पुनः मिलन होगा। (रामचरितमानस, भागवत महापुराण)

शिक्षा : शिव की तरह आप भी अपराध क्षमाकर लोकहित में वरदान दें ताकि संसार का क्रम चलता रहे।

श्रीकृष्ण की रासलीला से काम विलय

श्रीकृष्णावतार में सभी देवताओं का अहंकार मिटाने का कार्य श्रीकृष्ण ने किया। वृंदावन में कामदेव ने श्रीकृष्ण को चुनौती दी। श्रीकृष्ण ने शरदपूर्णिमा की चांदनी रात में ब्रजांगना गोपियों के साथ रास लीला आयोजित की। खुले मैदान में कामदेव को पराश्रित किया। शीतल चांदनी, पुष्पों की महक, गोपियों का सानिध्य, वंसी की ध्वनि सब काम के अनुकूल वातावरण होते हुए भी श्रीकृष्ण काम विकार से दूर रहे। इस प्रकार श्रीकृष्ण ने काम पर विजय प्राप्त की। (भागवत महापुराण स्कन्ध 10 (पूर्वार्ध) अध्याय 33)

शिक्षा : सच्ची कामविजय तभी है जब आप काम, विकार बढ़ाने की सब सामग्री होने पर भी संयम रख सकें। जिसके पास कुछ न हो तथा वह संयम रखे उसमें पक्की काम विजय नहीं है। यह तो मजबूती है।

कामदेव का अवतार प्रद्युम्न हुए। रति ने ऊषा के रूप में वाणासुर के यहाँ जन्म लिया। दोनों का विवाह हुआ शिव तथा श्रीकृष्ण के बीच युद्ध के बाद। उनका पुत्र अनिरूद्ध हुआ जो श्रीकृष्ण का पोत्र था।

कामदेव पर 'कामसूत्र' ग्रंथ की रचना ऋषि वात्सायन ने की है।

5.0 जय, सत् तथा कामदेव की विभूतियाँ तथा उनसे शिक्षा

जय में अहंकार न हो तथा यश सहयोगियों को देने से नेतृत्व प्रभावपूर्ण तथा धारणक्षय बनता है। जय से विनम्रता उत्पन्न होनी चाहिए। जय भी परमात्मा की कृपा है।

सत् की विभूति सत्त्व, सात्विकता तथा अच्छे निर्णय हैं। इससे अच्छे निर्णय प्राप्त होते हैं। इस दैवत्व से ज्ञान बढ़ता है तथा शांति, प्रसन्नता, निर्भयता प्राप्त होती है।

कामदेव की विभूति सौन्दर्य तथा आकर्षण है। यह धर्म सहित सन्तानोत्पत्ति का कारक है। तब यह भगवान का रूप होता है। इसके बिना जीवन तथा सृष्टि अपूर्ण हैं। एक अच्छे नेता में चुंबकीय आकर्षण शक्ति तथा नवाचार व सृजनात्मकता, परोपकार/कल्याण के लिए त्याग का भाव होना आवश्यक है।

जहाँ नन्द (आनन्द) तथा यशोदा (दूसरों का जय का यश देना) हैं वहीं श्रीकृष्ण पद्यारते हैं।

स्वयं को जीतना (संयम) सबसे बड़ी जय है।

5.8 सारांश

जय, निर्णय तथा सत् (सत्त्वगुण), कामदेव थे सब देव भाव हैं जो भगवान श्रीकृष्ण गीता में अपना स्वरूप स्वयं की विभूतियाँ बतलाते हैं। आत्म जय सर्वोच्च जय है जो आपको सर्वत्र जय दिलाती है। सत्य आधारित निर्णय भगवान की विभूति है। जय भी भगवान की कृपा है। इसका विजेता व्यक्ति को अहंकार नहीं करना चाहिए। उसे यश दूसरों को देना चाहिए। यथा नेता या स्वामी अपने सेवकों को जय का श्रेय दे तो

सेवक अपनी सफलता का श्रेय स्वामी को दे। इस प्रकार दोनों ही अहंकार से मुक्त रहेंगे। सत्त्व गुण ज्ञान, शांति, अभय देता है। तनाव मुक्त जीवन देता है। आप इससे रोगों से बचे रहेंगे तथा दीर्घायु भोग सकेंगे। कामदेव काम ँ(मग), सौन्दर्य, आकर्षण तथा सन्तानोत्पत्ति का देवता है। धर्म सहित काम भी भगवान का ही रूप है। काम के बिना भी जीवन तथा संसार दोनों ही अधूरे हैं। संतान बिना परिवार अधूरा है। कामदेव पर विजय तो महादेव तथा श्रीकृष्ण जैसे सर्वसमर्थ देवता ही पा सकते हैं। गृहस्थ को भी मनुस्मृति के अध्याय 3 में वर्णित विवाह तथा काम ँ(मग) की मर्यादाओं का पालन करना चाहिए।इन तीनों विभूतियों से आपको महत्त्वपूर्ण शिक्षायें मिलती है जिनको जीवन में उताकर आप जीवन को पूर्ण बना सकते हैं।

कामदेव की मूर्तियाँ, मंत्र व पूजा की भी परम्परा मिलती है। 'वर्ली' बीज कामदेव का है। इसके जप से पति–पत्नी के बीच मधुर सम्बन्ध होंगे।

महाभारत युद्ध में विजय का मार्ग प्रशस्त करने के लिए श्रीकृष्ण ने सत्य, नीति/धर्म को पुनः परिभाषित किया। इनका विश्लेषण कई भ्रमों को दूर कर देगी।

5.9 पारिभाषिक शब्दावली

1. जय, 2. निर्णय, 3. सत्त्वगुण, 4. धर्म, 5. काम।

5.10 सन्दर्भ

1. जयदयाल गोयन्दका : श्रीमद्भगवद्गीता तत्व विवेचनी टीका, गीता प्रेस, गोरखपुर
2. तुलसीदास : रामचरित मानस, हिन्दी टीका, भाई श्री हनुमान प्रसाद पौद्दार, गीता प्रेस, गोरखपुर
3. श्रीमद्भागवत पुराण हिन्दी टीका, 2007, गीताप्रेस गोरखपुर
4. केनोपनिषद्, हिन्दी टीका, गीता प्रेस, गोरखपुर
6. महाभारत हिन्दी टीका, वाल्यूम–8, गीता प्रेस, गोरखपुर
7. एन0एम0 खण्डेवाल : भारतीय प्रबन्धन गुरु मनु, मीसा प्रकाशन, नई दिल्ली
8. एन0एम0 खण्डेवाल : भारतीय प्रबन्धन गुरु वाल्मीकि, मीसा प्रकाशन, नई दिल्ली

5.11 बोध प्रश्न

1. आत्म जय का वर्णन कीजिए।
2. जय वाले नेता तथा जय वाले सेवकों का कैसा व्यवहार होना चाहिए? रामायण व महाभारत से उदाहरण दें।
3. निर्णय का महत्त्व बताइये। इसमें सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण की भूमिका स्पष्ट करिये।
4. ''महाभारत में सत्य धर्म को श्रीकृष्ण ने पुनः परिभाषित किया।'' उदाहरण देकर स्पष्ट करें।
5. कामदेव का परिचय दीजिये।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY